गुरुवाणी का वास कहाँ

सुथरे शाह जी शुरु से ही निडर और हँसमुख थे। वे हँसी मजाक में ही ज्ञान की बातें कर जाते थे। कई बार सुनने वाले स्पष्ट रूप से शिकायत भी कर देते थे कि आपका लाडला बिना सोचे-समझे कुछ भी बोल जाता है। परन्तु गुरु महाराज जानते थे कि उनका पुत्र जो कुछ भी बोलता है उसमे कुछ न कुछ रहस्य एवं सच्चाई छिपी रहती है। जब सुथरे शाह जी १५-१६ वर्ष के ही थे तो एक दिन श्री हरगोबिन्द साहिब जी महाराज का दरबार सजा हुआ था। गुरु महाराज अभी दरबार में आए नहीं थे। रागी कीर्तन कर रहे थे तथा साथ ही साथ शब्द की व्याख्या भी कर रहे थे। कई लोग दरबार में बैठकर बातें कर रहे थे। कुछ औरतें दरबार में बैठे-बैठे कपास भी अटेर रही थीं। रागी भी मन से कीर्तन नहीं कर रहे थे।

यह देखकर बालक सुथरे शाह (श्री जलज्योति शाह जी) से रहा नहीं गया। वह आगे बढ़े, दोनों हाथ जोड़कर रागियों की ओर पीठ करके तथा सुनने वालों की ओर मुँह करके कहने लगे, **'लख लानत है सुनाने वालों को और फिटे मुँह सुनने वालों के।'** इतने शब्द कहकर वह वहाँ से चले गए। रागियों ने इसे अपना अपमान समझा तथा संगत में भी सुथरे शाह जी के कहे शब्दों की चर्चा छिड़ गई। कीर्तन बन्द हो गया। थोड़ी देर बाद मीरी पीरी के मालिक सतगुरु जी महाराज गुरु दरबार में पधारे, देखा कि कीर्तन बन्द है। शोर मचा हुआ है। पूछने पर एक रागी उठा और विनती की, 'सच्चे पातशाह आज आपका लाडला सुथरा संगत में भला-बुरा कहकर चला गया है?' सतगुरु ने पूछा- 'क्यों भाई गुरुमुखों? वो क्या भला- बुरा कहकर गया है?' 'सच्चे पातशाह जी! आप सबकुछ जानते हैं।' रागी ने दोनों हाथ जोड़कर विनती की और कहा, सच्चे पातशाह जी उसने व्यक्तिगत रूप से तो किसी को भी भला-बुरा नहीं कहा। बल्कि संगत में यह कह गया है कि 'लख लानत है सुनाने वालों को और फिटे मुँह सुनने वालों के।'

सतगुरु जी हैरान थे कि यह बातें उसने क्यों कहीं, 'क्या आप में से उसे किसी ने कोई अपशब्द कहा था?' महाराज ने आज्ञा दी कि जहाँ भी सुथरा मिले उसे दरबार में पेश करें। सुथरे शाह वहाँ होते तो मिलते। वह तो शहर से बाहर चले गए थे।

कुछ दिनों बाद सुथरे शाह जी फिर दरबार में हाज़िर हुए, संगत की ओर मुँह करके कहने लगे - 'साध संगत जी, सत् करतार'। सभी सुनकर हँसने लगे, परन्तु रागियों को उनके द्वारा कही बातों का बहुत गुस्सा था। रागियों ने कहा-महाराज जी सुथरा (जलज्योति शाह) आ गया है। महाराज जी ने कहा-'भाई सुथरा' 'यह सब तुम्हारी शिकायत कर रहे हैं कि दरबार में कीर्तन चल रहा था। रागी साथ ही साथ शब्द की व्याख्या कर रहे थे। तो तुम इनको भला-बुरा कहकर चले गए।' 'नहीं, सच्चे पातशाह मैंने भला-बुरा किस लिए कहना था। इन्होंने मेरा क्या बिगाड़ा था जो मैं इनको भला-बुरा कहता।' सुथरे शाह जी ने भोले बनते हुए कहा।

'हाँ, हाँ हजूर! कुछ दिन हो गए जब यह सारी संगत के सामने भला-बुरा कहकर चला गया था।' रागी ने हाथ जोड़कर कहा। 'मेरे शहनशाह, मुझे तो ऐसी कोई बात याद नहीं जिस पर झगड़ा हुआ हो और मैंने भला-बुरा कहा था।' सुथरे ने कहा। वो रागी बोला, 'महाराज बात तो कोई नहीं थी, हम तो कीर्तन कर रहे थे और साथ ही शब्द की व्याख्या कर रहे थे। तो यह संगत में आकर हमें और सुनने वालों को फटकार कर चला गया।' सुथरे शाह जी ने कहा, 'पातशाह जी, इनसे पूछा जाए कि वह कौन सा शब्द था जिसकी यह व्याख्या कर रहे थे जब मैंने इन्हें फटकारा था।'

'महाराज, कितने दिन बीत गए, अब हमें यह याद नहीं कि कौन से शब्द की व्याख्या कर रहे थे जब यह भला-बुरा कहकर चला गया था।' 'महाराज, हम संगत में नाम वाणी का लाभ प्राप्त करने आते हैं, लेकिन यह रागी

साहिब कह रहे हैं कि उनको वो शब्द ही याद नहीं, जिसकी यह व्याख्या कर रहे थे। फिर उनसे मेरा भला-बुरा कहना ही ठीक रहा, जो अभी तक याद तो है, वो शब्द तो यह भूल गए'-सुथरे ने कहा। शहनशाह सुथरे शाह जी की बात सुनकर हँस पड़े और कहने लगे, 'सुथरे, जो तू कह रहा है ठीक है। गुरु सिखों को गुरुवाणी की ओर ध्यान देना चाहिए। परन्तु अज्ञानियों का मन बुराई की तरफ ज्यादा भटकता है।'

अगर मन वाणी के साथ एक सुर हो तो दूसरा कुछ भी कहता रहे उसकी बात पता ही नहीं चलती, पर जिसका मन बाहर की बातों की तरफ लगा रहे तो वहाँ **गुरुवाणी का वास** कैसे हो सकता है। मेरे शहनशाह पंचम पातशाह श्री गुरु अर्जुन देव जी ने सुखमणी साहिब में मन सुख का यह लक्षण बताया है ।

रहित अवर किछ अवर कमावत ।
मन नहि प्रीत मुखै गंड लावत ।।

महाराज जी के मुख से यह वचन सुनकर रागी बड़े लज्जित हुए और क्षमा माँगकर चले गए ।